'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

# विनोबा-प्रवचन

( सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित )

वर्ष ३, अंक ७६ | वाराणसी, शनिवार, २७ जून, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

जम्मू ( कश्मीर ) ९-६-'५९

## तालीमी संघ और सर्व-सेवा-संघ का संगम : एक नयी घटना

आज मैंने सोचा है कि तालीमी संघ और सर्व-सेवा-संघ दोनों ने मिलकर जो प्रस्ताव किया है, वही आपके सामने रखूँ और दो शब्द कहूँ। जम्मू और कश्मीर में आज नयी घटना हुई है। एक नयी चीज बनी है। अपने देश की ताकत बढ़ानेवाली चीज बन गयी है। वह यह है कि दोनों संघ मिल गये हैं। तालीमी संघ और सर्व-सेवा-संघ दोनों गांधीजी की संस्थाएँ थीं और अलग-अलग काम करती थीं। आपस-आपस में सलाह-मशविरा करती थीं। अलग-अलग काम करने के लिए वे दोनों अलग नहीं बनायी गयी थीं। परन्तु दोनों आज एक हो गयी हैं और मिला-जुला एक सर्व-सेवा-संघ हो गया है। इसकी चर्चा कई दिनों से चल रही थी, लेकिन आखिरी फैसला आज हुआ है। यह बहुत खुशी की बात है और यह खुशखबरी मैं आप लोगों को बताना चाहता हूँ।

### बापू की 'लोक-सेवक-संघ' की कल्पना

आप जानते ही हैं कि गांधीजी की मृत्यु को अब लगभग १२ साल हो रहे हैं। उसके पहले याने अपनी मृत्यु के पहले गांधीजी ने देश को एक आदेश दिया था कि 'कांग्रेस का स्वराज्य-प्राप्ति का अपना काम अब हो चुका है। इसके आगे उसे आम जन-समाज की सेवा में लग जाना चाहिए और 'लोक-सेवक-संघ' बनना चाहिए।' कांग्रेस को यह उनका आखिरी वसीयतनामा था, जो उन्होंने आखिरी दिनों में तैयार किया था। उस पर नेताओं ने बहुत सोचा, लेकिन कांग्रेस 'लोक-सेवक-संघ' नहीं बन सकी। गांधीजी की राय थी कि एक लोक-सेवक-संघ बने, जिसमें कांग्रेस तो पूरी तरह से शामिल हो ही, साथ ही उनकी रचनात्मक काम करनेवाली संस्थाएँ ( याने खादी, ग्रामोद्योग, नयी तालीम, स्त्री-सेवा, हरिजन-सेवा, हिंदू-मुस्लिम-एकता, शांति-सेना की स्थापना, आर्थिक आजादी—इस तरह उनका जो तालीमी प्रोग्राम था, उसे करनेवाले सभी लोग ) भी उसमें मिल जायँ। यदि ऐसा मिला-जुला संघ बने तो उसका सारे भारत पर अच्छा प्रभाव होगा। इस तरह कांग्रेस भारत भर में सब से बड़ी सेवा-संस्था बन जाती। लोगों को योग्य दिशा में ले जाने के लिए, निष्काम और निष्पक्ष भाव से उनकी सेवा करने के लिए, लोगों को ठीक राह दिखाने और नीति का विचार देने के लिए, लोगों की या सरकार की गलती होने पर उन्हें तटस्थ भाव से लोगों के सामने रखने के लिए एक नैतिक शक्ति देश के सामने खड़ी हो सकती थी। जिस काम के लिए कांग्रेस बनी थी, वह काम तो बन चुका था। फिर ऐसी एक शक्ति इस देश में खड़ी होती और कांग्रेस को जो पुण्य हासिल हो चुका था, उसका भी उसे लाभ मिलता तो वह ज्यादा बढ़ता। बापू का यही खयाल था, पर उस समय हमारे नेताओं के ध्यान में नहीं आया। मैं नेताओं को दोष नहीं देना चाहता। उस समय नेताओं की कुछ ऐसी वृत्ति थी कि कांग्रेस देश को बचाने के लिए ऐसी ही कायम रहे। फलस्वरूप गांधीजी की कल्पना के अनुसार लोक-सेवक-संघ नहीं बन पाया।

### काश ! उनकी सलाह मानी जाती !

यही कारण है कि आज हालत यह है कि एक नैतिक आवाज उठाकर सब लोग उसके अनुसार काम करें, ऐसी कोई संस्था या ऐसे कोई व्यक्ति देश के सामने नजर नहीं आ रहे हैं। कांग्रेस के नेता, जो एक जमाने में देश के नेता थे, आज एक पार्टी के नेता बन गये हैं। दूसरी पार्टियों के नेता भी देश के नेता नहीं, पार्टी के ही नेता हो गये हैं। नयी-नयी पार्टियाँ निकल रही हैं और उनके नेता जन-समाज के सामने एक-दूसरे का खंडन करते हैं। इससे निष्क्रिय जनता में किसी प्रकार की क्रियाशीलता नहीं आ रही है। एक-दूसरे का शब्द तोड़ने का काम हो रहा है। जिसे हम नैतिक नेतृत्व कह सकते हैं, उसका सर्वथा अभाव है। ऐसी कोई बड़ी संस्था या जमात नहीं है, जो अपनी ताकत से देश पर असर डाल सके और देश को गलत रास्ते पर जाने से परावृत्त करे। इससे देश में एक प्रकार की निष्क्रियता, शून्यता, रिक्तता, खालीपन आ गया है और जनता भ्रांत हो गयी है। कहाँ जायँ और कहाँ न जायँ, यह जनता को नहीं समझता। एक नेता कहता है—इधर चलो तो दूसरा नेता कहता है, उधर चलो। ऐसी हालत में जनता में शक्ति होनी चाहिए। लेकिन इतनी शक्ति जनता में नहीं आयी है कि वह ठीक तरह से सोचे और स्वयं अपने फैसले कर सके। एक नेता दूसरे को गाली देता है, उसका खंडन करता है तो दूसरा नेता पहले को गाली देता है और लोग दोनों की गालियाँ सुनते हैं। इससे बचानेवाली तारक

शक्ति का अभाव स्पष्ट दीख रहा है। ऐसा न होता, अगर गांधीजी की वह सलाह मान ली गयी होती। लेकिन गांधीजी के साथियों ने सोचा कि हम अपनी ताकत से दुनिया को नहीं बचा सकेंगे। इसलिए लोक-सेवक-संघ नहीं बना।

## सर्व-सेवा-संघ की प्रवृत्तियाँ

आठ साल हुए, हम भूदान, ग्रामदान, शांति-सेना, सर्वोदय-पात्र, खादी, ग्रामोद्योग, नयी तालीम आदि सारी बातें बताकर ग्राम-स्वराज्य की कल्पना देश के सामने रख रहे हैं। यह नया काम शुरू हुआ है और आज यहाँ एक और नयी बात हुई है। तालीमी संघ और सर्व-सेवा-संघ दोनों एक हो गये हैं। बहुत दिनों से सोचा जा रहा था कि गांधीजी के बाद उतनी ताकत चाहे पैदा नहीं होगी, लेकिन कम-से-कम लोगों को एक नैतिक राह दिखाने के लिए, सलाह देने के लिए एक ऐसी संस्था होनी ही चाहिए। ऐसा सोचकर सर्व-सेवा-संघ बनाया गया। उसमें तालीमी संघ को भी दाखिल करने का बहुत दिनों से सोचा जा रहा था। आखिरी फैसला आज हुआ है और यह खुशखबरी मैं आप लोगों को सुना रहा हूँ।

## सर्वसम्मति से निर्णय : एक प्रमुख विशेषता

इन बारह साल में जो इजाफा, जो वृद्धि इस काम में हुई है, उसमें शांति-सेना, भूदान, ग्रामदान का काम हुआ है और जमीन के बारे में सब का समाधान करने का नया तरीका हाथ में आ गया है। यह सब कार्यक्रम यह संस्था करेगी और मुझे कहने में खुशी होती है कि लोगों को भी कुछ राह मिलेगी। इस सर्व-सेवा-संघ में बहुत बड़ी बात यह है कि हिन्दुस्तान के नेक, प्रेम से काम करनेवाले और जनता की सेवा के सिवाय दूसरा कोई खयाल न रखनेवाले चार-पाँच हजार कार्यकर्ता इसमें काम कर रहे हैं। हिन्दुस्तान की जन-संख्या चालीस करोड़ है, इस हिसाब से तो पाँच हजार सेवकों की यह जमात बहुत बड़ी नहीं कही जा सकती। फिर भी विशेष बात यह है कि इनका जो काम चलता है, उसमें फैसले सर्वसम्मति से होते हैं। बहुमत की बात इसमें नहीं है। आज जो चुनाव चलते हैं और दूसरे भी काम अकक्षियत और अक्सरियत से होते हैं, लोकशाही के नाम से होते हैं और उन्हीं के कारण सत्ता के झगड़े गाँव-गाँव में पैठ गये हैं, गाँव-गाँव को आग लग रही है। ये सारी बातें तब तक हल नहीं होंगी, जब तक हम मिल-जुलकर काम नहीं करेंगे और फैसले सर्वसम्मति से नहीं करेंगे। सर्व-सेवा-संघ ने तय किया है कि जो भी फैसला हम करेंगे, सर्वसम्मति से करेंगे। जहाँ सर्वसम्मति नहीं होगी, वहाँ हम बार-बार सोचते रहेंगे और जब तक सर्व-सम्मति नहीं होगी, तब तक फैसले नहीं करेंगे।

## धर्म में अल्पमत-बहुमत की बात अनुचित

करीब एक महीना हुआ, हम पंजाब में थे। उन दिनों वहाँ शिरोमणि गुरुद्वारा के झगड़े भी चल रहे थे और आज भी चल रहे हैं। मास्टर तारासिंहजी से हमारी बातें हुईं। हमने कहा था कि चुनाव में अल्पमत-बहुमत के झगड़े होते हैं तो वह अलग बात है। लेकिन ऐसे झगड़े धर्म के मामले में नहीं होने चाहिए। लेकिन इसी कारण वहाँ झगड़े पैदा हो रहे हैं और सिख जमात के टुकड़े हो रहे हैं। एक कहता है मेरी चलेगी, दूसरा कहता है मेरी चलेगी। दोनों ओर बड़े-बड़े मजबूत नेता हैं। दोनों मेरे पास आये थे, जब मैं पंजाब में था। मैंने कहा कि राजनीति के झगड़े धर्म में नहीं आने चाहिए। अल्पमत-बहुमत की बात धर्म में नहीं आनी चाहिए। इस तरह कोई धर्म नहीं टिक सकता। सिखों के गुरुग्रन्थ में ही कहा है, "पंच पखाण पंच प्रधाना। पंचों का गुरु एक धियाना।" पाँचों का ध्यान जब एक होगा, तभी फैसला होगा, तभी काम होगा और तभी धर्म मजबूत बनेगा। नहीं तो ४९ एक ओर और ५१ दूसरी ओर तो ५१ की ही चलेगी। याने ४९ पर ५१ का राज! यह आग लगानेवाली बात राजनीति में चलती है। वह वहाँ से भी हट जाय, यही मैं चाहता हूँ। अतः धर्म में तो यह बात होनी ही नहीं चाहिए। यह तभी होगा, जब सत्ता विकेंद्रित होगी और फैसले सर्वसम्मति से होंगे। राजनीति में यह बात आनी ही चाहिए, साथ ही साथ धर्म में भी होनी चाहिए। आखिर सिखों ने जो धर्म बनाया था, वह किसलिए बनाया था? हिंदू और मुसलमानों के झगड़े होते थे। मूर्तिपूजा करनी चाहिए या नहीं, इस पर झगड़े चलते थे। उस वक्त नानक ने सब को बचाने-वाली एक मजबूत जमात खड़ी की। आज वह टूट रही है।

मैंने उनसे कहा कि जैसे आप गुरुद्वारा में जाते हैं तो अपने जूते बाहर छोड़कर जाते हैं, वैसे ही राजनैतिक पार्टी के जूते भी बाहर रखकर धर्मकार्य करें। कांग्रेस का जूता, अकाली दल का जूता, कम्युनिस्ट का जूता, समाजवाद का जूता—आदि तरह-तरह के जूते आप लोग पहनते हैं। इन्हें आप न पहनें या पहनना ही है तो पहनें, लेकिन कृपा कर गुरुद्वारा के काम के समय उन्हें बाहर खोलकर अन्दर आयें। जब मैंने यह मिसाल उन्हें दी तो उन्होंने कहा कि आपकी बात बिलकुल सही है, बड़ी अच्छी है, लेकिन यह कम्बख्त "लेकिन" बीच में आ जाता है। क्या किया जाय? किन्तु ध्यान रखें कि अगर बीच में यह 'लेकिन' आता है तो धर्म टूट जाता है। सब मिलकर धर्म बनता है, टूटता नहीं। इस वास्ते मेरी अपने सिख भाइयों से अपील है कि धर्म के संबंध में एकता कायम रखें और तब सारे सवाल हल करें। उनके गुरुओं ने जो सिखावन दी है, उस पर पूर्ण श्रद्धा रखकर धर्म के सवाल हल करें। सर्वसम्मति से फैसले नहीं होते तो कभी भी अल्पमत-बहुमत से सवाल हल न करें। जब तक सर्वसम्मति नहीं होती, फैसला न करें। नानक ने यही धर्म सिखाया है।

जब हम हाईस्कूल में पढ़ते थे, तब हमारे क्लास में शिक्षक ने गणित का एक उदाहरण हल करने के लिए दिया। जब शिक्षक ने पूछा, तब दो-तीन लड़कों के सिवाय और किसी का उत्तर ठीक नहीं था। बाकी के लड़के कहने लगे कि 'तीस लड़कों में से तीन लड़के जो कहते हैं, वह ठीक और २७ लड़कों का कहना ठीक नहीं, यह कैसे होगा? सत्ताइस तो बहुमत होगा, इस वास्ते सत्ताइस का ही कहना ठीक मानना चाहिए।' लेकिन गणित के फैसले ऐसे बहुमत से नहीं होते हैं। इसी तरह जहाँ धर्म की बात आती है, वहाँ कितने लोग मूर्तिपूजा को मानते हैं और कितने नहीं मानते, इससे फैसला हो सकता है? आखिर यह धर्म है या धर्म का उपहास? स्पष्ट है कि यह धर्म की दिल्लगी है। इस वास्ते मेरी मेरे सिख भाइयों से अपील है कि आप अपने जूते बाहर रखकर सारे फैसले करें। इस तरह से सूरत निकल सकती है या नहीं, यह कि आप सोचें। अल्पमत-बहुमत को इसमें मत लाइये। वे कहते हैं यह विचार अच्छा है, लेकिन कैसे बनेगा? मैं कहना यह चाहता हूँ कि वह वैसे ही बनेगा, जैसे कि सर्व-सेवा-संघ करता है। अब यह ठीक है कि सर्व-सेवा-संघ बहुत छोटी जमात नहीं है, लेकिन वह बड़ी बनेगी तो भी फैसले सर्वसम्मति से ही होंगे।

## 'क्वेकर' : दूसरा उदाहरण

मैंने सिख भाइयों के सामने 'क्वेकर' की मिसाल रखी। वे

हजारों की तादाद में स्कूल वगैरह चलाते हैं। सेवा के काम करते हैं। वे लोग अपने फैसले सर्वसम्मति से करते हैं। इस वास्ते उनका काम लोगों के सामने एक आदर्श जैसा होता है। सर्व-सेवा-संघ ने भी सर्वसम्मति से फैसले करने का तय किया है। इसलिए अल्पमत-बहुमत के झगड़े धर्म में लायेंगे तो धर्म न टिकेगा।

## ज्ञान और कर्म साथ-साथ रहना जरूरी

विज्ञान के जमाने में तंगनजरिया नहीं चलेगा। जब तक छोटी-छोटी पार्टियाँ रहेंगी और देश की बागडोर भी ऐसे लोगों के हाथ में रहेगी, जिनका नजरिया तंग है, तब तक देश की तरक्की नहीं होगी। इस आणविक युग में छोटे दिल से काम नहीं चलेगा। इसलिए धर्म के मामले में यह राजनीति के झगड़े कभी न लायें। हमें अपनी ताकत बनाने के लिए यह जरूरी है कि हम जो काम करें, सर्वसम्मति से करें और एकता कायम रखें। धर्म के काम में यह बहुत जरूरी है। रचनात्मक काम में भी यह होना जरूरी है। इसलिए सर्व-सेवा-संघ ने जो प्रस्ताव किया है, वह बहुत महत्त्व का है। जम्मू और कश्मीर में यह बहुत बड़ी बात बनी है। गांधीजी के साथ रहनेवाली जमात, एक सर्व-सेवा-संघ और दूसरी तालीमी संघ कोई अलग काम करने के खयाल से नहीं थी। बल्कि इसी खयाल से रही कि तालीम का काम करना है तो खास जानकार लोग होने चाहिए। सब लोग जानकार कैसे होंगे? बल्कि यह दोनों को अलग अलग रखने का खयाल ही गलत है। यह कभी नहीं हो सकता कि इल्म और अमल, ज्ञान और कर्म दोनों अलग हों। दोनों कभी अलग नहीं हो सकते। अगर अलग हुए तो दोनों जड़ बनेंगे, प्राणहीन बन जायँगे। इसलिए ज्ञान के साथ कर्म और कर्म के साथ ज्ञान होना जरूरी है। इसी दृष्टि से ये दोनों संघ एक हो गये हैं, यह बहुत बड़ी बात बनी है।

## समर्थों का सहयोग ही प्रशस्त

हिंदुस्तान में तरह-तरह के भेद पड़े हैं, टुकड़े-टुकड़े हो गये हैं। कुछ लोगों की कल्पना है कि 'कुछ लोग दिमागी काम कर सकते हैं तो कुछ लोग हाथों से। ऐसे लोग, जो हाथों से काम नहीं कर सकते, पाँव से नहीं चल सकते, लेकिन दिमागी काम कर सकते हैं, पंगु और लंगड़े हैं। उनको आँखें हैं, लेकिन चल नहीं सकते। कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो हाथों से काम कर सकते हैं, पांव से चल सकते हैं, लेकिन उनके पास विद्या नहीं है। परिणामस्वरूप दो टुकड़े हो गये हैं। ये दूसरे प्रकार के लोग अंधे हैं। इन अन्धों का और लंगड़ों का सहयोग होना चाहिए, तभी समाज चलेगा। याने लंगड़े के कन्धे पर अन्धा बैठेगा। लंगड़ा राह दिखाये और अन्धा चले। इस तरह से अन्ध-पंगु-न्याय के अनुसार काम होगा। लेकिन मैं कहता हूँ कि यह अक्षमों का सहयोग हुआ, इससे काम नहीं होगा। समर्थों का सहयोग होना चाहिए। इसलिए जिनके पास ज्ञान नहीं है, उन्हें ज्ञानशक्ति देनी चाहिए। अक्सर ऐसे लोग देहात में होते हैं। देहात में कर्म-शक्ति है, लेकिन ज्ञानशक्ति नहीं है। अतः ज्ञानशक्ति देहात में पहुँचानी चाहिए। शहर में विद्या है, लेकिन काम करने की ताकत नहीं। कर्मशक्ति शहर में नहीं है। लेकिन जब शहर में काम करने की ताकत बनेगी और देहात में विद्या पहुँचेगी तथा दोनों समाज एकरस बनेंगे, तभी काम बनेगा। याने वह समर्थों का सहयोग होगा। आज जो बँटवारा हो गया है, वह नहीं रहेगा। दोनों को दोनों तरह के काम मिलने चाहिए। जिनके पास कर्म-शक्ति है, उन्हें दिमागी काम भी मिलना चाहिए। इसी तरह जिनके पास दिमागी काम है, उन्हें हाथ का काम भी मिलना चाहिए। इस तरह दोनों एक बनेंगे, तभी काम होगा। दोनों आज अलग हो गये हैं, इस लिए यह झगड़ा पैदा होता है। दोनों एक होने पर निश्चय ही कुछ राह मिलेगी। आजकल कहा जाता है कि 'मिल में इतने-इतने हैन्ड्स हैं, याने इतने मजदूर हैं। लेकिन हम कहते हैं कि हरएक को हैंड्स तो होना ही चाहिए और 'हेड'—सिर भी होना चाहिए। हरएक के पेट में भूख है, इसलिए हरएक को हाथों से काम करना चाहिए और हरएक को दिमागी काम भी मिलना चाहिए। तभी समाज बनेगा। यही ध्यान में रखकर सर्व-सेवा-संघ और तालीमी संघ दोनों एक हो रहे हैं, यह बहुत बड़ी बात है। ◆◆◆

भारत सेवक समाज के कार्यकर्ताओं के बीच

जम्मू (कश्मीर) ७-६-'५९

# सर्वेण्ट आफ इण्डिया सोसाइटी और भारत सेवक समाज

'भारत सेवक समाज' यह नाम महात्मा गोखले की 'सर्वेण्ट आफ इण्डिया सोसाइटी'( Servants of India Society ) का हमारी भाषा में किया हुआ अनुवाद है। उसी ढाँचे पर पंजाब में लाला लाजपतराय ने 'पीपुल्स सोसाइटी' ( People's Society ) बनायी थी।

## सोसाइटी के सदस्यों का आदर्श

गोखले की उस संस्था में अच्छे, चरित्रवान, अध्ययनशील और सेवापरायण लोगों को लिया जाता था। उनको 'ऑनरेरियम' दिया जाता था, जो बहुत ही कम था। अब भी सर्वेण्ट आफ इण्डिया सोसाइटी में नये लोगों को लिया जाता है। लेकिन गोखले, देवधर, श्रीनिवास शास्त्री आदि के जमाने में वह जितनी व्यापक थी, आज उतनी नहीं है। फिर भी अच्छे-अच्छे लोग उसमें काम कर रहे हैं। श्री ठक्कर बाप्पा, हृदयनाथ कुंजरू आदि उसी सोसाइटी के हैं। उसके सदस्यों की दुनिया में यह प्रतिष्ठा है कि वे गैरजानिबदार—किसी प्रकार का पक्षपात न करनेवाले, स्वतंत्र दिमाग के, शांत मनोवृत्ति के और किसी विषय पर बिना अध्ययन के न बोलनेवाले होते हैं। किन्तु आज के इस भारत सेवक समाज के जितने सम्पर्क में मैं आया हूँ, उस पर से मुझे लगता है कि जैसे सोसाइटी के सदस्य उसके लिए अपना जीवन समर्पण कर देते थे ( आज की भाषा में जो 'जीवनदानी' कहला सकते हैं ), वैसी कोई चीज 'भारत सेवक समाज' में नहीं दीखती।

सोसाइटी के कार्यकर्ताओं को कोई आदेश नहीं दिया जाता था, सिवाय इसके कि वे अपने दिमाग को स्वतंत्र रखकर सेवा करें। साल में एक दफा मिलकर चर्चा करें और अपने-अपने काम की रिपोर्ट दें। वे काम के लिए भारत भर में कहीं भी जा सकते थे, लेकिन उनके अपने-अपने सेवा-क्षेत्र भी थे। उस सोसाइटी में अच्छे परखे हुए और चरित्रवान लोग ही लिये जाते थे। उसकी कोई तुलना 'भारत सेवक समाज' के साथ नहीं हो सकती। सोसाइटी की हैसियत ही दूसरी थी। वे अपने दिमाग से काम करते थे, पूरे आजाद थे। उनका एक

बन्धुत्वभाव था। उन्होंने देश की तरह-तरह-से सेवा की है। अकालपीडितों की सेवा की है, शोध ( Investigation ) का काम किया है। उनमें से कुछ लोग असेम्बली और पार्लमेन्ट में भी पहुँचे हैं, जहाँ वे अपना स्वतंत्र विचार पेश करते हैं। उन्होंने अखबार, स्कूल आदि चलाये हैं। ठक्कर बाप्पा की हरिजन-सेवा तो विख्यात ही है। इस तरह वे अपनी बुद्धि को पूरा आजाद रखते थे। बिना किसी बंधन के जिस तरह अपनी बुद्धि का विकास चाहते थे, कर सकते थे।

## गांधीजी के आश्रम की निष्ठाएँ

गांधीजी ने अपनी कल्पना के अनुसार आश्रम बनाया। एकादश व्रतों की निष्ठा की बात थी। आश्रम में उन व्रतों का पालन करते हुए दुनिया के हित में विरोधी न हो, ऐसी अविरोधी सेवा करने की बात थी। गोखले ने 'सर्वेण्ट आफ इण्डिया सोसाइटी' में राजनीति को आध्यात्मिक रूप देने की बात चलायी। गांधीजी ने उसका आशय स्पष्ट कर दिया और व्रतों की बात रखी। 'विश्वहित की अविरोधी भारत की सेवा' यह मूल उद्देश्य रखकर उसकी सिद्धि के लिए साधनस्वरूप एकादश व्रत और उनके लिए खादी, गो-सेवा, आर्थिक समता आदि का रचनात्मक कार्यक्रम—इस तरह गांधीजी ने हमारे सामने एक पूरा चित्र रखा और लोगों को काम करने के लिए छोड़ दिया। वे लोग अपना पूरा समय इसी काम में देते थे। आज भी थोड़े लोग हैं, जो काम करते हैं, ट्रेनिंग देने के लिए आश्रम आदि चलाते हैं।

## 'समाज' में न ट्रेनिंग और न व्रतनिष्ठा

भारत सेवक समाज में न ट्रेनिंग की योजना है, न आश्रम जैसी कोई व्रतनिष्ठा की बात। कार्यक्रम के बारे में भी मैं जहाँ तक समझा हूँ, सरकार की पंचवर्षीय योजना की पूर्ति में जनता में कुछ काम चलाने की ही बात है। परन्तु उसमें पूरा जीवन देनेवाले मैंने कोई नहीं देखे। देवधर, श्रीनिवास शास्त्री, ठक्कर बाप्पा जैसे अपना पूरा जीवन समर्पण करनेवाले मनुष्य उसमें नहीं हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि 'भारत सेवक समाज' सरकार के साथ किसी न किसी प्रकार से जुड़ी हुई संस्था है। सरकार के साथ जुड़ना कोई गलत बात नहीं है। सरकार अपनी ही है, लेकिन इन दिनों जहाँ कोई संस्थाएँ सरकार के साथ जुड़कर काम करती हैं, वहाँ लोगों की कार्यक्षमता लगभग खत्म हो जाती है। स्वराज्य-प्राप्ति के लिए लोगों में कार्य-क्षमता थी, जो अब खत्म हो गयी है। अब लोग सोचते हैं कि हमारे ही भाई सरकार में हैं, इसलिए सारे काम वे ही करें। भारत सेवक समाज पर लोगों का खास भरोसा भी नहीं दीखता। इस संस्था में 'सर्वेण्ट आफ इण्डिया सोसाइटी' के जैसे त्याग-परायण, सेवा-परायण लोग हैं, ऐसा लोग नहीं मानते। गांधीजी की व्रतनिष्ठा की बात बहुत ऊँची थी, इसलिए उसे मैं छोड़ देता हूँ। लेकिन सोसाइटी का जो ध्येयवाद था, वह भी भारत सेवक समाज में नहीं दीखता है।

## जीवनदान देकर व्यक्तिगत संपर्क बढ़ायें

अब आपसे क्या हो सकता है, इस बारे में मैं कुछ कहूँगा। १. इस संस्था में ऐसे लोग आने चाहिए, जो अपना जीवन इसमें समर्पण कर दें। २. इस संस्था को ऐसे काम करने चाहिए, जिनसे अत्यन्त दुःखी, पीड़ित गरीबों को सीधी मदद मिले। कहीं रास्ता बनाया तो सबको लाभ होता है तो गरीबों को भी होता है। सर्वसाधारण स्वास्थ्य सुधारना अच्छा है, किन्तु आँख बिगड़ी हो तो उसका भी इलाज होना ही चाहिए। इस तरह समाज के जिन अवयवों को कोई बीमारी हो, उनके लिए कुछ विशेष रूप से आज नहीं किया जा रहा है। आप कोआपरेटिव सोसाइटी बनाते हैं तो उसमें बड़े और छोटे मालिक आते हैं, लेकिन भूमिहीनों का वहाँ कोई हिसाब ही नहीं है। इसमें भूमि-हीनों की हालत बिगड़ भी सकती है, क्योंकि पहले अलग-अलग मालिक थे तो कुछ मालिक उदार भी हो सकते थे। परन्तु सोसाइटी को कोई हृदय नहीं होता, कोई व्यक्तिगत संपर्क नहीं होता। इसलिए आपकी कोआपरेटिव सोसाइटी की योजना में मजदूरों की हालत सुधारने की कोई बात नहीं है। दुःखियों के लिए आपके पास क्या योजना है, इसका कोई उत्तर मुझे भारत सेवक समाज की तरफ से नहीं मिला।

सरकार की पंचवर्षीय योजना की यही हालत है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना बन रही थी, तब मुझे उसके बारे में सुझाव देने के लिए कहा गया था। मैंने पूछा कि छोटे देहात के लोगों के लिए, देहातों के नीचे के कस्बों के लिए, शहर के दुःखी लोगों के लिए इसमें कितना है, यह बताइये। उन्होंने इधर-उधर से देखकर कुछ आंकड़े निकाले, क्योंकि योजना उनके लिए नहीं बनायी गयी थी। उस वक्त मेरे साथ योजना-आयोग के भूतपूर्व सदस्य आर० के० पाटील थे। मैंने उनसे कहा कि इसका परीक्षण कीजिये। उन्होंने परीक्षण करके बताया कि 'कुछ आंकड़े इधर-उधर से बटोर लिये गये हैं, बाकी इसमें कुछ सार नहीं है।'

यह ठीक है कि अगर आज हिंदुस्तान में उत्पादन बढ़ाने का कुछ काम किया जाय तो गरीबों को कुछ मिलेगा ही। सर्व-साधारण का स्तर बढ़े, इसकी कोशिश की जा रही है। लेकिन खास गरीबों के लिए क्या किया जा रहा है? जब हम नागपुर-क्षेत्र में थे, तब एक शिकायत हुई कि कई कैदियों का वजन घट रहा है, उन्हें ठीक आहार नहीं मिलता। फिर जेलवालों ने सबका वजन लेकर औसत निकालकर जवाब दिया कि खास शिकायत करने की कोई बात नहीं है। औसतन सिर्फ आधा पौंड वजन ही घटा है। अब सोचने की बात है कि जिनका वजन १०-१२ पौंड घटा, उनकी क्या हालत थी? यह एक जबर्दस्त प्रश्न है। इसकी ओर ध्यान देना निहायत जरूरी है। मगर आज हम देखते हैं कि लोग ऐसी बातों को छोटी समझकर उनकी ओर ध्यान नहीं देते। किन्तु आज हमें ऐसी बातों पर भी पूर्ण ध्यान देना होगा। इसीमें जन-समाज का कल्याण है।

[ चालू ]

## अनुक्रम

१. तालीमी संघ और सर्व-सेवा-संघ....
जम्मू ९ जून '५९ पृष्ठ ५२१
२. सर्वेण्ट आफ इण्डिया सोसाइटी....
जम्मू ७ जून '५९ " ५२३

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता : गोलघर, वाराणसी ( उ० प्र० ) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी